International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 7 No. 35 March – April - 2026

समकालीन कविता मे पर्यावरण चेतना

प्रा. डॉ. भरत त्र्यंबक शेणकर

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, ॲड्. मनोहरराव नानासाहेब देशमुख कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, राजूर, तहसील अकोले, जिला- अहिल्यानगर (महाराष्ट्र)

***Corresponding Author –* प्रा. डॉ. भरत त्र्यंबक शेणकर**

DOI - 10.5281/zenodo.20485666

प्रस्तावना:

साहित्य और पर्यावरण का अंतर्संबंध सृष्टि के आदिकाल से ही रहा है। आदिकाल से लेकर आज तक हिंदी साहित्य पर्यावरण का अभिन्न अंग रहा है। पर्यावरण हमारे चारो और का वह परिवेश है जो हमें हमेशा प्रभावित करता रहता है। मनुष्य सौंदर्य प्रिय प्राणी है। मनुष्य का और प्रकृति का अत्यंत गहरा संबंध रहा है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश इन पाँच तत्वों से प्रकृति की रचना हुई है ऐसा माना जाता है। अर्थात प्रकृति के ये अंग है। मनुष्य ने प्रकृति को देवत्व का स्वरूप दिया है। हिंदी कविता मे प्रकृति का अत्यंत सुंदर चित्रण आरंभ से ही दिखाई देता है। सुमित्रानंदन पंत की प्रारंभिक रचनाएँ प्राकृतिक सौंदर्य से ओतप्रोत है। कवि प्राकृतिक सौंदर्य की ओर इतना आकृष्ट है कि वह अपने आपको भूल जाता है। प्रकृति के संदर्भ में पंत जी कहते है -

छोड द्रुमों की मृदु छाया
तोड़ प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल-जाल में
कैसे उलझा दूँ लोचन
भूल अभी से इस जग को"।[1]

हिंदी साहित्य की समकालीन कवि अपने काव्य को समृद्ध करने हेतु प्रकृति को माध्यम नहीं बनाता बल्कि वह प्रकृति को एक अखंड सत्ता के रूप में देखता है। बाबा नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, केदारनाथ अग्रवाल, अज्ञेय, त्रिलोचन,मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय जैसे महान कवियों ने प्रकृति, समाज और संस्कृति को अपनी कविता विशेष स्थान दिया है। कवि अपनी कविता के माध्यम से समकालीन समाज का वास्तविक रूप चित्रित करते है। आज का प्राकृतिक वातावरण शुद्ध नही है l अन्न मनुष्य के लिए प्रकृति का वरदान है। अन्न ही कवि नागार्जुन के लिए वास्तविक तृप्ती व भोग है। उनके लिए फसलों और खेतो की समृध्दि वास्तविक सुख की अनुभूती है -

बहुत दिनों के बाद
अबकी मैने जी-भर देखी
पकी सुनहली फसलों की मुस्कान
बहुत दिनों के बाद।[2]

नागार्जुन सुख की अनुभूति के साथ-साथ प्रकृति के बंजर रूप का भी चित्रण अपनी कविता में करते है। अकाल की वास्तविकता का चित्रन उनकी 'अकाल और उसके बाद' कविता में देखने को मिलता है। नागार्जुन की यह एक अत्यंत मार्मिक कविता है जो अकाल के समय की भुखमरी और उसके खत्म होने के बाद की राहत को चित्रित करती है –

कई दिनों तक चुल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोयी उनके पास

कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआँ उठा आंगन से उपर कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखे कई दिनों के बाद।[3]

कवियों की नजर में संपूर्ण वसुधा हमारा घर है, हमारी पालनहार है। 'वसुधैव कुटुंबकम' की यह भावना कवि को मानवता की और ले चलती है। त्रिलोचन जी 'मै-तुम शिष्य' कविता मे लिखते है -' इस पृथ्वी की रक्षा मानव का अपना कर्तव्य है, इसकी वनस्पतियाँ, चिडियाँ जीव-जंतु उसके सहयात्री है। इसी तरह जलवायू और सारा आकाश अपनी-अपनी रक्षा मानव से चाहते हैं।

समकालीन कवि प्रकृति के विकृत स्वरूप को अपने काव्य कला से सुंदर रूप मे परिवर्तित कर देते है। नागार्जुन की निम्न काव्यपंक्तियाँ दृष्टव्य है-

नंगे तरू है नंगी डालें
इन्हें कौनसे हाथ सँभाले
खीझ भड़कती घुटती आहें
झेल न पाती इन्हें निगाहें
मौसम के जादू मचलेंगे
कब इनमें टेसू निकलेंगे
हरियाली का छाजन होगा
आसमान कब साजन होगा।[4]

समकालीन कविताओं में प्रकृति को एक ओर ग्राम्य-संस्कृति से जोडा है तो दूसरी ओर जन चेतना से। जनता तक अपनी भावनाओं को संप्रेषित करने के लिए व्यंग मे अपनी बात कवि खुद इस तरह कहता है -

मौलिसिरी के ढेर- ढेर के ताजे टटके फूल
अपनी गँवई पगडंडी की चंदनवर्णी धूल
सिखाऐंगे झरनों के बहने का ढंग,
ढलेंगे छंद मादल बाँसुरी के संग।[5]

केदारनाथ अग्रवाल जीवंत प्रकृति-चित्रण के लिए अधिक ख्यात रहे हैं। जनवादी कवि होने के कारण उन्होंने ग्रामीण प्रकृति के चित्र अपनी कविता में अधिक उतारे हैं जो खेत-खलिहानों से सम्बंधित हैं। पेड़-पौधे, नदियां, पहाड़, फसल सबकुछ उनकी कविताओं में उपलब्ध हो जाता है। 'खेत का दृश्य' नामक कविता में उन्होंने धरती को राधा के रूप में तथा कृषक को कृष्ण के रूप में देखा है। आसमान ही इसका दुपट्टा है और धानी फसल ही इसकी घंघरिया है-

"आसमान की ओढ़नी ओढ़े।
धानी पहने फसल घंघरिया।।
राधा बनकर धरती नाची।
नाचा हंसमुख कृषक संवरिया।।"[6]

बढ़ते औद्योगीकरण से जंगल, पहाड़ों को बडी निर्ममता से काटा जा रहा है। समुद्र को सीकोडा जा रहा है, जिससे सुनामी जैसे कहर, बाढ़ या बादल फटने से होनेवाली अतिवृष्टी आदि प्राकृतिक प्रकोप को मानव झेल रहा है। अर्थात मानव ने ही प्रकृति को नोंच- खसोटकर यह संकट पैदा किया है। पहाड़ी नदी की व्यथा निम्न पंक्तियों में स्पष्ट है -

नदी माँ, तुम्हारी ममता में
बदतर ऋतुओं को जियाहै मैंने
देखता हूँ, मैली हो रही हो तुम
आदिम सभ्यता के मनोहर चित्र
रेत के बवंडरों से पाटती हुई
लोककथाओं में तुम स्वयं एक दिन
किंवदंती बनकर दर्ज हो जाओगी।[7]

समकालीन कवि अपने परिवेश के प्रति हमेशा सजग रहा है। अपने आस-पास हो रहे तांडव से भी वह व्यथित और चिंतित होता है। वह मानव की आँखो पर बँधी पट्टी को खोलना चाहता है-

क्यों तुम नष्ट कर देना चाहते हो

धरती के विस्तार को, समुद्र की मछलियों को
आदमी की उपस्थिति को,
ये पेड़, ये परिंदे, ये पहाड, ये झरनें

कैसे तुम सब कुछ हँसते हुए नष्ट कर देना चाहते हो?[:]

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि कवि नागार्जुन, मुक्तिबोध, अज्ञेय, रामदरश मिश्र, अरुण कमल, राजेश जोशी, लीलाधर जगूड़ी आदि अनेक कवियों की कविताओंमें प्रकृति .व पर्यावरण संरक्षण का प्रमुख स्वर मुखर रूप मे दिखाई देता है । समकालीन कविता लोकअनुभव से युक्त है। प्रकृति के साथ गहरी संवेदना हर कवि की रही है और पर्यावरण के प्रति चिंता भी । अरुण कमल और ज्ञानेन्द्रपति ने तो गंगा प्रदूषण को सजीव रूप मे व्यक्त किया है । उनकी कविताएँ इस संकट से तादात्म्य स्थापित करती प्रतीत होती है। इस तरह समकालीन कविता में चित्रित प्रकृति व पर्यावरण संरक्षण बोध समाज को, व्यक्ति को एक नई दिशा प्रदान कर सकता है।

संदर्भ सूची:

1. सम्मेलन पत्रिका, सं. रामकिशोर शर्मा, हिंदी साहित्य संमेलन इलाहाबाद जुलाई- दिसम्बर2018 पृ - 189
2. 'बहुत दिनों के बाद', संपादक शोभकांत, नागार्जुन रचनावली भाग 1, राजकमल प्रकाशन 2003
3. अकाल और उसके बाद, सतरंगे पंखों वाली, नागार्जुन
4. नंगे तरू हैं नंगी डाले, संपादक शोभाकांत, नागार्जुन रचनावली भाग-2
5. 'सिंदूर तिलकित भाल', नामवरसिंह, नागार्जुन: प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988
6. 'फूल नहीं रंग बोलते हैं', सं० अशोक त्रिपाठी, प्रथम संस्करण 2009, साहित्य भण्डार प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० 31
7. कुछ और कविताएँ,पृ-10
8. अनुशीलन, सितम्बर-दिसम्बर2013,पृ-67